



इलाहाबाद उच्च न्यायालय
लखनऊ
आपराधिक अपील संख्या – 74/2005

देव नाथ सिंह

...अपीलकर्ता (गण)

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य

...प्रत्यर्थी (गण)

अपीलकर्ता (गण) के अधिवक्ता: – विजय प्रताप, बलजीत सिंह, जे.पी. यादवप्रत्यर्थी (गण) के अधिवक्ता :- शासकीय अधिवक्ता
-----न्यायालय संख्या – 12

माननीय न्यायमूर्ति मनीष माथुर

1. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता श्री बलजीत सिंह और विपक्षी/राज्य हेतु विद्वान अपर शासकीय अधिवक्ता श्री विश्वास सारस्वत को सुना गया।
2. यह आपराधिक अपील, विशेष/अपर सत्र न्यायाधीश (अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति अधिनियम), बहराइच द्वारा सत्र परीक्षण संख्या 484 वर्ष 1997 (उत्तर प्रदेश राज्य बनाम देव नारायण सिंह एवं अन्य) में पारित निर्णय एवं आदेश दिनांक 09.12.2004 के विरुद्ध दायर की गई है, जो अपराध संख्या 78 वर्ष 1994 अंतर्गत भारतीय दंड संहिता की धारा 323, 504, 506, 452 और अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989 की धारा 3(1)(x) से उद्धृत है, जिसमें अपीलार्थी को अनुसूचित जाति / अनुसूचित जनजाति अधिनियम की धारा 3(1)(x) के अंतर्गत दोषसिद्ध करते हुए छह माह के कठोर कारावास और 500/- रुपये के अर्थदंड से दंडित किया गया है, तथा अर्थदंड की अदायगी न करने पर उसे 3 माह का अतिरिक्त कारावास भुगतना होगा।
3. अभियोजन पक्ष के अनुसार, घटना दिनांक 18.05.1994 को प्रातः 10:00 बजे की बताई गई है, [जब अपीलार्थी सह-अभियुक्त उमा नाथ सिंह के साथ परिवादी के घर में घुस गया और परिवादी एवं उसके परिवार के

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है एवं इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी एवं सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

सदस्यों को चोटें पहुँचाई तथा जातिगत अपमानजनक टिप्पणी कर उन्हें अपमानित किया। उसी दिन अर्थात् दिनांक 18.05.1994 को सायं 05:10 बजे एक प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज कराई गई थी। कार्यवाही के दौरान, परिवादी-नंकू की मृत्यु हो गई और परिवार को प्रतिस्थानी अभियोजन साक्षी-1 श्रीमती राजरानी द्वारा सिद्ध किया गया। परिवार की अन्य सदस्या अभियोजन साक्षी-2 श्रीमती बिटाना की भी परीक्षा की गई, जबकि अभियोजन साक्षी-3 मंशा राम और अभियोजन साक्षी-4 राम आसरे, जिनके बारे में कहा गया था कि उन्होंने परिवार के सदस्यों को अपीलार्थी और सह-अभियुक्त से बचाया था, पक्षद्रोही घोषित कर दिए गए।

4. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता का तर्क है कि अपीलार्थी के अभिकथित आरोपों और अभियोग के अवलोकन मात्र से यह संकेत मिलता है कि अनुसूचित जाति / अनुसूचित जनजाति अधिनियम के प्रावधान लागू नहीं होते क्योंकि कथित घटना घर के भीतर हुई थी न कि सार्वजनिक परिदृश्य में। अतः यह निवेदन किया गया है कि अपीलार्थी को अभिकथित अपराध में झूठा फँसाया गया है। उपर्युक्त परिप्रेक्ष्य में, अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा **कुरुप्पुदयर बनाम राज्य, प्रतिनिधि उप पुलिस अधीक्षक, लालगुड़ी त्रिची एवं अन्य**, एआईआर 2025 एससी (क्रिमिनल) 513 में दिए गए निर्णय का आश्रय लिया है।

5. यह भी तर्क दिया गया है कि उपहति आख्या द्वारा परिवादी और उसके परिवार को चोट पहुँचाने के आरोपों की पुष्टि नहीं हुयी क्योंकि कोई चोट नहीं पाई गई थी।

6. विद्वान अधिवक्ता ने इस तथ्य की ओर भी ध्यान दिलाया कि यद्यपि अपीलार्थी और सह-अभियुक्त उमा नाथ सिंह के विरुद्ध यहीं आरोप लगाए गए थे, परंतु दोषसिद्धि केवल अपीलार्थी के विरुद्ध दर्ज की गई जबकि सह-अभियुक्त को दोषमुक्त कर दिया गया।

7. अतः यह निवेदन किया गया है कि समान आरोप और साक्ष्य के आधार पर एक सह-अभियुक्त को दोषमुक्त करना और दूसरे को दोषसिद्ध करना भेदभाव की श्रेणी में आता है, जिसे माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा **योगरानी बनाम राज्य द्वारा निरीक्षक पुलिस**, एआईआर 2024 एससी 4641 और **जावेद शौकत अली कुरैशी बनाम गुजरात राज्य**, एआईआर 2023 एससी 4444 में अनुचित ठहराया गया है।

8. विद्वान अपर शासकीय अधिवक्ता ने इस आधार पर इस आपराधिक अपील का विरोध किया है कि अपीलार्थी के विरुद्ध अभिकथित आरोप सह-अभियुक्त उमा नाथ सिंह के विरुद्ध अभिकथित आरोपों से भिन्न थे। उन्होंने प्रथम सूचना रिपोर्ट के साथ-साथ अभियोजन साक्षी-1 श्रीमती राजरानी और अभियोजन साक्षी-2

श्रीमती बिटाना के बयानों का संदर्भ देते हुए कहा कि वास्तव में अपीलार्थी ने ही परिवादी-नंकू को एक दिन पूर्व दिनांक 17.05.1994 को अपने खेत पर बुलाया था और उसकी सेवाएँ ली थीं, जिसके परिणामस्वरूप पक्षकारों के बीच विवाद हुआ। उनका तर्क है कि अपीलार्थी के विरुद्ध लगाए गए आरोपों के परिशीलन से स्पष्ट होता है कि अपीलार्थी ने जाति आधारित अपमानसूचक शब्दों का उपयोग कर परिवादी को अपमानित किया था, अतः अनुसूचित जाति / अनुसूचित जनजाति अधिनियम के प्रावधान स्पष्ट रूप से स्थापित होते हैं। यह भी तर्क दिया गया कि आक्षेपित निर्णय के अवलोकन से यह स्पष्ट होगा कि अपीलार्थी और सह-अभियुक्त के बीच अंतर स्पष्ट किया गया है, जिसके कारण सह-अभियुक्त को दोषमुक्त किया गया जबकि अपीलार्थी को दोषसिद्ध किया गया।

9. पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं के तर्कों पर विचार करने और पत्रावली पर उपलब्ध सामग्री, जिसमें विचारण न्यायालय की पत्रावली भी सम्मिलित है, के परिशीलन के उपरांत, अपीलार्थी और सह-अभियुक्त के विरुद्ध आरोप 18.05.1994 को प्रातः लगभग 10:00 बजे हुई एक घटना के संबंध में थे, जब अपीलार्थी सह-अभियुक्त उमा नाथ सिंह के साथ परिवादी नंकू के घर में घुस गया और उन पर तथा उनके परिवार के सदस्यों पर हमला कर उन्हें चोटें पहुँचाई। अपीलार्थी और सह-अभियुक्त द्वारा जाति आधारित अपमानजनक शब्द भी कहे गए थे।

10. अभिलेख से ज्ञात होता है कि परिवादी-नंकू की मृत्यु अपना बयान दर्ज कराने से पूर्व ही हो गई थी और आरोपों को अभियोजन साक्षी-1 श्रीमती राजरानी और अभियोजन साक्षी-2 बिटाना द्वारा सिद्ध किया गया था। आरोपों से यह भी संकेत मिलता है कि जब अभियुक्त परिवादी और उसके परिवार पर हमला कर रहे थे, तब शोर सुनकर मंशा राम (अभियोजन साक्षी-3) और राम आसरे (अभियोजन साक्षी-4) ने हस्तक्षेप किया, जिसके परिणामस्वरूप परिवादी और उसके परिवार के सदस्य बच गए।

11. तथापि, अभिलेख से स्पष्ट होता है कि उपर्युक्त अभियोजन साक्षी-3 मंशा राम और अभियोजन साक्षी-4 बिटाना (त्रुटिवश लिखित) ने अभियोजन वाद का समर्थन नहीं किया और उन्हें पक्षद्रोही घोषित कर दिया गया।

12. अतः दोषसिद्धि अभियोजन साक्षी-1 श्रीमती राजरानी और अभियोजन साक्षी-2 श्रीमती बिटाना के साक्ष्य के आधार पर दर्ज की गई है।

13. आक्षेपित निर्णय के परिशीलन से ज्ञात होता है कि प्रदर्श संख्या 8, 9, 10 और 11 के रूप में प्रस्तुत उपहति आख्या ने अभियोजन पक्ष के कथन ककी पुष्टि नहीं की क्योंकि घायलों के शरीर पर कोई चोट नहीं पाई

गई, मात्र दर्द की शिकायत दर्ज की गई थी। इसके पश्चात विचारण न्यायालय ने परिवादी और उसके परिवार के सदस्यों को चोटें लगने के पक्ष को खारिज कर दिया।

14. अनुसूचित जाति / अनुसूचित जनजाति अधिनियम की प्रयोज्यता के संबंध में, माननीय उच्चतम न्यायालय ने **कुरुप्पुदयर** (उपरोक्त) में स्पष्ट रूप से धारित किया है कि अभियुक्त द्वारा परिवादी/पीड़ित के प्रति की गई जाति आधारित अपमानजनक टिप्पणियाँ 'सार्वजनिक दृष्टि' में होनी चाहिए। 'सार्वजनिक दृष्टि' के पक्ष पर चर्चा की गई और 'सार्वजनिक स्थान' एवं 'सार्वजनिक दृष्टि' के मध्य अंतर स्पष्ट किया गया; यह धारित किया गया कि अनुसूचित जाति / अनुसूचित जनजाति अधिनियम के तत्वों के लागू होने के लिए, वह स्थान जहाँ ऐसी टिप्पणियाँ की गई हैं, सार्वजनिक दृष्टि में होना चाहिए, अर्थात् वह स्थान खुला होना चाहिए जहाँ जनता के सदस्य अभियुक्त द्वारा पीड़ित के प्रति की गई टिप्पणियों को देख या सुन सकें। आगे यह भी धारित किया गया कि जहाँ अपराध दीवारों से घिरे स्थान में होता है जहाँ जनता के सदस्य उपस्थित नहीं होते हैं, वहाँ यह नहीं कहा जा सकता कि ऐसा कृत्य सार्वजनिक दृष्टि में हुआ है और इसलिए अनुसूचित जाति / अनुसूचित जनजाति अधिनियम के प्रावधान लागू नहीं होंगे। निर्णय के प्रासंगिक अंश निम्नवत हैं:-

10. 'सार्वजनिक दृष्टि के भीतर कोई भी स्थान' शब्दावली सर्वप्रथम इस न्यायालय के समक्ष **स्वर्ण सिंह एवं अन्य बनाम राज्य, स्थायी अधिवक्ता के माध्यम से एवं अन्य***, (2008) 8 एससीसी 435 के मामले में विचारार्थ प्रस्तुत हुई थी। इस न्यायालय ने **हितेश वर्मा बनाम उत्तराखंड राज्य एवं अन्य** (2008) 10 एससीसी 710 वाद में **स्वर्ण सिंह** (उपरोक्त) का संदर्भ देते हुए विधिक स्थिति को पुनः स्पष्ट किया:

14. इस प्रावधान का एक अन्य मुख्य तत्व 'सार्वजनिक दृष्टि के भीतर किसी भी स्थान' पर अपमान या धमकी है। 'सार्वजनिक दृष्टि के भीतर स्थान' के रूप में क्या माना जाना चाहिए, यह प्रश्न इस न्यायालय के समक्ष **स्वर्ण सिंह बनाम राज्य निर्णय** में विचारार्थ प्रस्तुत हुआ था। न्यायालय ने 'सार्वजनिक स्थान' और 'सार्वजनिक दृष्टि के भीतर किसी भी स्थान' की अभिव्यक्ति के मध्य अंतर स्पष्ट किया था। यह धारित किया गया था कि यदि कोई अपराध इमारत के बाहर किया जाता है, जैसे कि घर के बाहर लॉन में, और लॉन को सीमा दीवार के बाहर सड़क या गली से किसी व्यक्ति द्वारा देखा जा सकता है, तो वह लॉन निश्चित रूप से सार्वजनिक दृष्टि के भीतर का स्थान होगा। इसके विपरीत, यदि टिप्पणी किसी भवन के भीतर की जाती है, लेकिन वहाँ जनता के कुछ सदस्य मौजूद

हैं (मात्र संबंधी या मित्र नहीं), तो वह अपराध होगा क्योंकि वह सार्वजनिक दृष्टि में है।" न्यायालय ने निम्नवत धारित किया: (एससीसी पृ. 443-44, प्रस्तर 28)

28. प्रथम सूचना रिपोर्ट में यह आरोप लगाया गया है कि प्रथम सूचनाकर्ता विनोद नगर को अपीलार्थी संख्या 2 और 3 द्वारा अपमानित किया गया (उसे "चमार" कहकर) जब वह परिसर के द्वार के समीप कार के पास खड़ा था। हमारी राय में, यह निश्चित रूप से सार्वजनिक दृष्टि के भीतर का स्थान था, क्योंकि घर का द्वार निश्चित रूप से सार्वजनिक दृष्टि का स्थान है। मामला भिन्न होता यदि कथित अपराध किसी इमारत के भीतर किया गया होता और वह सार्वजनिक दृष्टि में भी नहीं होता। हालाँकि, यदि अपराध भवन के बाहर किया जाता है, जैसे कि घर के बाहर लॉन में, और लॉन को सीमा दीवार के बाहर सड़क या गली से किसी व्यक्ति द्वारा देखा जा सकता है, तो लॉन निश्चित रूप से सार्वजनिक दृष्टि के भीतर का स्थान होगा। साथ ही, यदि टिप्पणी इमारत के भीतर की जाती है, लेकिन वहाँ जनता के कुछ सदस्य (न कि मात्र संबंधी या मित्र) उपस्थित हैं, तो भी यह अपराध होगा क्योंकि यह सार्वजनिक दृष्टि में है। इसलिए, हमें 'सार्वजनिक दृष्टि के भीतर स्थान' की अभिव्यक्ति को 'सार्वजनिक स्थान' की अभिव्यक्ति के साथ भ्रमित नहीं करना चाहिए। कोई स्थान निजी हो सकता है परंतु फिर भी सार्वजनिक दृष्टि के भीतर हो सकता है। दूसरी ओर, एक सार्वजनिक स्थान का साधारण अर्थ वह स्थान होगा जिसका स्वामित्व या पट्टा सरकार या नगरपालिका (या अन्य स्थानीय निकाय) या ग्राम सभा या राज्य की किसी संस्था के पास हो, न कि निजी व्यक्तियों या निकायों के पास।"

11. अतः यह देखा जा सकता है कि, 'सार्वजनिक दृष्टि के भीतर' स्थान होने के लिए, स्थान खुला होना चाहिए जहाँ जनता के सदस्य अभियुक्त द्वारा पीड़ित को दी गई अपमानजनक टिप्पणियों को देख या सुन सकें। यदि कथित अपराध दीवारों के अन्दर होता है जहाँ जनता के सदस्य उपस्थित नहीं होते हैं, तो यह नहीं कहा जा सकता कि यह सार्वजनिक दृष्टि के भीतर किसी स्थान पर हुआ है।"

15. अपने बयान में, अभियोजन साक्षी-1 श्रीमती राजरानी ने कहा है कि अपीलार्थी देव नाथ सिंह, उमा नाथ सिंह के साथ नंकू की तलाश में उनके घर आए और घर में प्रवेश करने के बाद परिवार के सदस्यों के साथ मारपीट

शुरू कर दी। यही पक्ष बाद में अभियोजन साक्षी-2 श्रीमती बिटाना द्वारा भी कहा गया, जिसने यह भी कहा कि मारपीट और अपमानजनक टिप्पणियाँ अपीलार्थी और सह-अभियुक्त के घर में प्रवेश करने के बाद हुई।

16. **कुरुप्युदयर** (उपरोक्त) के निर्णय में इंगित सिद्धांतों को लागू करने पर, घटना परिवादी के घर की दीवारों के भीतर हुई है जहाँ जनता का कोई सदस्य उपस्थित नहीं था। इसलिए, यह धारित किया जाता है कि चूँकि उपर्युक्त कथित टिप्पणियाँ न तो सार्वजनिक स्थान पर थीं और न ही सार्वजनिक दृष्टि के भीतर, अतः अपीलार्थी के विरुद्ध अभिकथित अनुसूचित जाति / अनुसूचित जनजाति अधिनियम के प्रावधान लागू नहीं होंगे।

17. अभिलेख से ज्ञात होता है कि यद्यपि अपीलार्थी के विरुद्ध परिवादी और उसके परिवार पर हमला करने और उन्हें चोट पहुँचाने के आरोप हैं, परंतु इसकी पुष्टि उपहति आख्या द्वारा नहीं हुई और विचारण न्यायालय द्वारा भी इसे खारिज कर दिया गया था।

18. आक्षेपित निर्णय यह भी दर्शाता है कि सह-अभियुक्त उमा नाथ सिंह को उसके विरुद्ध अभिकथित आरोपों से दोषमुक्त कर दिया गया, जबकि अपीलार्थी को उन्हीं आरोपों और उन्हीं साक्ष्यों पर दोषसिद्ध किया गया। विचारण न्यायालय द्वारा अपीलार्थी और सह-अभियुक्त के बीच एकमात्र अंतर यह दर्ज किया गया कि अपीलार्थी ने ही दिनांक 18.05.1994 से एक दिन पूर्व परिवादी-नंकू को किसी कार्य के लिए बुलाया था और इसके परिणामस्वरूप घटना हुई। अभिलेख से ज्ञात होता है कि अपीलार्थी के विरुद्ध आरोप दिनांक 18.05.1994 को हुई घटना के संबंध में लगाए गए हैं। अपीलार्थी के विरुद्ध उससे एक दिन पूर्व अर्थात् दिनांक 17.05.1994 को हुई किसी घटना का कोई आरोप या अभियोग नहीं लगाया गया है। इस प्रकार, यह स्पष्ट है कि विचारण न्यायालय द्वारा किया गया विभेद अपीलार्थी और सह-अभियुक्त के विरुद्ध लगाए गए आरोप, अभिकथन और साक्ष्य के प्रतिकूल था। ऐसी परिस्थितियों में, विचारण न्यायालय द्वारा अपीलार्थी और सह-अभियुक्त उमा नाथ सिंह के बीच किया गया विभेद अभिलेख से पुष्ट नहीं होता है।

19. उपर्युक्त पक्ष के संबंध में, माननीय उच्चतम न्यायालय ने **जावेद शौकत अली कुरैशी (उपरोक्त)** में निम्नानुसार धारित किया है:-

15. जब दो अभियुक्तों के विरुद्ध प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों के समान या समरूप साक्ष्य हों और उन्हें समान या समरूप भूमिका दी गई हो, तो न्यायालय एक अभियुक्त को दोषसिद्ध और दूसरे को दोषमुक्त नहीं कर सकता।

ऐसे वाद में, दोनों अभियुक्तों के मामले 'समानता के सिद्धांत' द्वारा शासित होंगे। इस सिद्धांत का अर्थ है कि

दांडिक न्यायालय को समान वादों का निर्णय समान रूप से करना चाहिए, और ऐसे मामलों में, न्यायालय दो अभियुक्तों के मध्य भेदभाव नहीं कर सकता, जो कि विभेदकारी होगा।"

20. यही तर्क **योगरानी** (उपरोक्त) में भी इस प्रकार प्रस्तुत किया गया है:-

10. न्यायालय एक अभियुक्त को दोषसिद्ध और दूसरे को दोषमुक्त नहीं कर सकता जब दो अभियुक्त व्यक्तियों के विरुद्ध समान या समरूप साक्ष्य वर्तमान हों। **जावेद शौकत अली कुरैशी बनाम गुजरात राज्य 2023** आईएनएससी 829 के मामले में, इस न्यायालय ने धारित किया है कि:

15. जब दो अभियुक्तों के विरुद्ध प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों के समान या समरूप साक्ष्य हों और उन्हें समान या समरूप भूमिका दी गई हो, तो न्यायालय एक अभियुक्त को दोषसिद्ध और दूसरे को दोषमुक्त नहीं कर सकता। ऐसे मामले में, दोनों अभियुक्तों के वाद साम्यता के सिद्धांत द्वारा शासित होंगे। इस सिद्धांत का अर्थ है कि दांडिक न्यायालय को समान वादों का निर्णय समान रूप से करना चाहिए, और ऐसे वादों में, न्यायालय दो अभियुक्तों के मध्य भेदभाव नहीं कर सकता, जो कि विभेदकारी होगा।"

इस वाद में, अपीलार्थी के विरुद्ध समान आरोप होने के कारण, जो अभियुक्त संख्या 3 और 4 के विरुद्ध थे, विचारण न्यायालय अन्य दो को दोषमुक्त करते हुए अपीलार्थी को दोषसिद्ध नहीं कर सकती थीं।"

21. वर्तमान तथ्यों और परिस्थितियों में उपर्युक्त निर्णयों की प्रयोज्यता पर, यह स्पष्ट है कि अपीलार्थी को समान आरोपों और समान साक्षियों (अभियोजन साक्षी-1 और अभियोजन साक्षी-2) के साक्ष्य के आधार पर दोषसिद्ध किया गया है, जबकि सह-अभियुक्त को दोषमुक्त कर दिया गया, वहीं अभियोजन साक्षी-3 और अभियोजन साक्षी-4 पक्षद्रोही घोषित किए गए थे।

22. जैसा कि ऊपर चर्चा की जा चुकी है, विचारण न्यायालय द्वारा अपीलार्थी और सह-अभियुक्त के बीच किया गया विभेद अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री के विपरीत था और उस संबंध में निष्कर्ष त्रुटिपूर्ण है।

23. उपर्युक्त विवेचना के आलोक में, यह स्पष्ट होने के कारण कि अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989 की धारा 3(1)(x) के अंतर्गत अपीलार्थी की दोषसिद्धि स्थापित नहीं होती है, सत्र परीक्षण संख्या 484 वर्ष 1997 (उत्तर प्रदेश राज्य बनाम देव नारायण सिंह एवं अन्य) में पारित आक्षेपित निर्णय एवं आदेश दिनांक 09.12.2004, जिसके द्वारा अपीलार्थी को उक्त धारा के अंतर्गत दोषसिद्ध किया गया था, एतद्द्वारा अपास्त किया जाता है।

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है एवं इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी एवं सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

24. अतः अपील स्वीकार की जाती है।

25. अपीलार्थी जमानत पर है, उसे आत्मसमर्पण करने की आवश्यकता नहीं है। उसके जमानत बंधपत्र निरस्त किए जाते हैं और प्रतिभूण को उन्मोचित किया जाता है।

26. अपीलार्थी को दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 437-क जो भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता (बीएनएसएस), 2023 की धारा 481 के समरूप है, के अनुपालन में, संबंधित न्यायालय की संतुष्टि के अनुरूप व्यक्तिगत बंधपत्र और उतनी ही राशि के दो प्रतिभू प्रस्तुत करने का निर्देश दिया जाता है।

27. आवश्यक सूचना और अनुपालन हेतु इस निर्णय की एक प्रति और मूल अभिलेख तत्काल संबंधित विचारण न्यायालय को प्रेषित किया जाए।

24 मार्च, 2026

लक्ष्मण

(न्यायमूर्ति मनीष माथुर)